© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 10 , Issue : 02 | April - June 2023

पं0 दीनदयाल उपाध्याय की सामाजिक – सांस्कृतिक सक्रियता

डॉ0 दर्शना देवी,
सहायक प्राध्यापिका (राजनीतिशास्त्र)
साऊथ पुआइण्ट डिग्री कॉलेज,
रत्नगढ़–बागडू, सोनीपत।

शोध आलेख

सामाजिक क्षेत्र में दीनदयाल उपाध्याय का योगदान मुख्यतः राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के कार्यकर्ता के नाते ही रहा संघ के अनेक कार्यकर्ता समाज के विविध क्षेत्रों में भेजे गए थे। उसी क्रम में दीनदयाल उपाध्याय को राजनीतिक क्षेत्र का दायित्व मिला था, लेकिन उन्होंने कभी भी अपने आप पर राजनीति को हावी नहीं होने दिया। इसके अलावा वे लेखन के माध्यम से भी अपनी सामाजिक भूमिका अदा करते थे। वे पत्रकार भी थे। वस्तुतः दीनदयाल उपाध्याय राजनीतिक क्षेत्र में सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टिपथ के प्रतिनिधि थे। राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ के एक प्रशिक्षण शिविर में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था कि संघ के स्वंयसेवकों को राजनीति से दूर रहना चाहिए, जैसे कि मैं हूँ।[1]

एक राजनीतिक दल के महामंत्री का यह कथन पहेली था। अतः स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने कहा था कि, "संघ का स्वंयसेवक समाज के हर क्षेत्र में सामाजिक–सांस्कृतिक कार्यकर्ता के नाते ही जाता है। विभिन्न राजनीतिक–आर्थिक संस्थाओं में काम करते हुए भी वह उन संस्थाओं व क्षेत्र की एकांगिता को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता। राजनीति में जाते ही आज जो सत्तावाद एवं दलवाद व्यक्ति पर हावी होता है, इसको राजनीतिक क्षेत्र की मजबूरी माना जाता है। स्वंयसेवक को इससे दूर रहना चाहिए।"[2]

मुख्य शब्द : सामाजिक, सांस्कृतिक, स्वंयसेवक, राष्ट्रवादी, लोकसंस्कार

राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ समाज में अपने विचारानुसार राष्ट्रवादी निष्ठाओं को समाजव्यापी बनाने के लिए लोकसंस्कार, लोकचेतना एवं लोकसंग्रह का कार्य करता है। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ को एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन बनाने में जिन कुछ लोगों का योगदान है, दीनदयाल उपाध्याय उनमें से एक थे। जिस सांस्कृतिक अधिष्ठान पर मा0 स0 गोलवलकर ने संघ को एक व्यापक आंदोलन बनाया, अनुशासित कार्यकर्ताओं की देशभर में एक उल्लेखनीय शक्ति उत्पन्न की, दीनदयाल उपाध्याय इस कार्यकर्ता–निर्माण के कार्य में उतने ही महत्वपूर्ण थे जितने मा0 स0 गोलवलकर, एकनाथ रानाडे या बाबासाहब आपटे आदि थे।

उन्होंने संगठन के मस्तिष्क का काम किया। इस संबंध में बाबासाहब आपटे ने लिखा था कि,

"नेता के नाते देशभर में ख्याति प्राप्त करने के बाद भी उनकी विनम्रता और आत्मीय सम्बन्धों में परिवर्तन नहीं आया था। राजनीति, अर्थशास्त्र आदि जिन विषयों का अध्ययन मैंने कभी नहीं किया था, उस संबंध में कोई अड़चन उत्पन्न होती थी तो निःशंक भाव से मैं पंडित जी के पास जाकर पूछ लिया करता था और मेरा समाधान कर दिया करते थे। उनके साथ कितने विषयों पर चर्चा हुई होगी, उनका कोई ठिकाना नहीं। कई बार मेरे मन में कोई लेख लिखने की कल्पना आती थी और कई कारणों से मैं स्वयं को लिखने में असमर्थ पाता था, ऐसे समय पंड़ित जी से भेंट हो जाती थी तो उनके सामने लेख की रूपरेखा रखकर उनको ही लेख लिखने की प्रार्थना मैं करता था। वे प्रायः स्वीकार करते थे। एक बार हाँ कहा तो मैं निश्चित हो जाता था।"[3]

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 10 , Issue : 02 | April - June 2023

राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के प्रारंभिक काल एवं उसके संस्थापक के विषय में प्रथम शोधकर्ता के नाते नारायणहरि पालकर ने 'डॉ0 हेडगेवार का जीवनचरित' लिखा। यह मूल रचना मराठी में थी। दीनदयाल उपाध्याय जी ने ही उसको हिंदी पाठकों को उपलब्ध करवाया था। उन्होंने सहज ही पुस्तक का हिंदी अनुवाद कर दिया था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में जो साहित्य उपलब्ध है वह मुख्यतः मा0 स0 गोलवलकर, उमाकांत केशव, बाबासाहब आपटे, एकनाथ रानाडे, दीनदयाल उपाध्याय व दत्तोपंत ठेंगड़ी का ही है।

अखिल भारतीय दल के महामंत्री होते हुए भी उपाध्याय जी संघकार्य के समक्ष राजनीति को गौण समझते थे। वे प्रतिवर्ष देश भर में लगभग तीस–चालीस दिन संघ–शिक्षा वर्गों के लिए प्रयास करते थे। संघ की प्रत्येक बैठक में अवश्य उपस्थित होते थे। इस संदर्भ में यादवराज जोशी ने एक घटना का वर्णन किया है कि,

"सन् 1967 में विभिन्न राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेने वाले कुछ स्वंयसेवक नागपुर में एकत्र थे। ठीक उसी समय उत्तरप्रदेश में कांग्रेस मंत्रिमण्डल का पतन हुआ था। साझा मंत्रिमण्डल गठित करने हेतु विपक्षी दलों की सरगर्मियां तेज हो गई थीं। कुछ कार्यकर्ता, जिन्हें नागपुर पहुँचना था, इस भँवर में फँस गए और नागपुर नहीं पहुँच सके। इस बात का पता लगने पर दीनदयाल उपाध्याय उद्विग्न हो उठे थे। वे बोले थे कि हम पहले स्वंयसेवक हैं, और कुछ बाद में। जब भी संघ द्वारा कोई आह्वान किया जाता था। तो हमारा कर्तव्य हो जाता है कि अन्य सभी बातों को एक ओर रखकर संघ की पुकार पर चलें।"[4]

उपाध्याय जी संघकार्य के समक्ष अन्य कार्यों को प्राथमिक नहीं मानते थे। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ ने सामाजिक–जीवन में जो राष्ट्रनिष्ठा, अनुशासनबद्धता तथा संगठनकौशल उत्पन्न करने का कार्य किया था। उसमें दीनदयाल उपाध्याय जी की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

1. अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध के दौरान सन् 1948 में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की स्थापना हुई थी, उत्तर भारत में विद्यार्थी परिषद् को छात्रों का महत्वपूर्ण संगठन बनाने में उपाध्याय की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अपनी स्थापना के तुरंत बार परिषद् ने संविधान–निर्मात्री सभा को ज्ञापन देने के लिए भारतीयकरण उद्योग नाम से एक हस्ताक्षर अभियान चलाया था। संविधान के भारतीयकरण की दृष्टि से इसमें चार माँगें थीः

(1) संविधान में देश का नाम 'भारत' रखा जाये।
(2) राष्ट्रगीत 'वंदेमातरम्' हो।
(3) 'हिन्दी' को राष्ट्रभाषा घोषित की जाये।
(4) संविधान का निर्माण हिन्दी में हो[5]।

'भारतीयकरण उद्योग' योजना के लिए जिस क्रियान्वयन समिति का निर्माण किया गया, उपाध्याय जी उस समिति के सदस्य थे[6]। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'एज्युकेशनल चेंज' में शिक्षा–संबंधी दीनदयाल के विचारों को भी संदर्भित किया गया था[7]। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ की वैचारिक अवधारणा के आधिकारिक प्रवक्ता होने के नाते संघ के कार्यकर्ताओं द्वारा चलाए गए विभिन्न क्षेत्र के प्रकल्पों एवं संगठनों में उपाध्याय की शिक्षकवत् भूमिका रहती थी। इस दृष्टि से विद्यार्थी परिषद् के विकास में, जो कि आज देश में छात्रों का सबसे बड़ा संगठन है, दीनदयाल उपाध्याय जी का भी योगदान रहा है।

2. विश्व हिन्दू परिषद्

30 अगस्त, 1964 को बम्बई में स्वामी चिन्मयानंद के संदीपनी आश्रम में 'विश्व हिन्दू परिषद' नामक एक सामाजिक–धार्मिक संगठन की स्थापना हुई। इस संगठन की स्थापना बैठक में भाग लेने वाले लोगों में

प्रमुख थे संत तुकड़ोजी महाराज, मास्टर तारा सिंह, बी0 जी0 देशपाण्डे, मा0 स0 गोलवलकर तथा स्वामी चिन्मयानंद बैठक के संयोजक एस0 एस0 आपटे थे जो धार्मिक क्षेत्र के इस कार्य के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा नियुक्त थे[8] दीनदयाल उपाध्याय जी का इस परिषद् से कोई सीधा संबंध नहीं था, लेकिन परिषद् की विचार–दृष्टि को प्रस्तुत करने वाला प्रथम आलेख '**विश्व हिन्दू परिषद्: एक सामयिक योजना**' दीनदयाल उपाध्याय ने ही लिखा था। उन्होंने विश्व हिन्दू परिषद् को अपने लेख में इस प्रकार परिभाषित किया था कि,

"हिन्दू की अनेक परिभाषा विद्वानों ने की है। परिभाषा की कठिनाईयों के उपरांत भी, विश्व के करोड़ों मानव हैं जो अपने को हिन्दू कहते हैं। हिन्दू नाम से ख्यात समाज भी है और गुण–दोषमय समाज की जीवनधारा भी है। हिन्दुत्व के इस बोध की अभिव्यक्ति ही विश्व हिन्दू परिषद् है। उन्होंने विश्व हिन्दू परिषद के उद्देश्य को इस प्रकार वर्णित किया था कि हिन्दू तत्वज्ञान के आधार पर आचरण–संहिता के विधान की आवश्यकता है। आचरण–संहिता देश–काल–परिस्थिति के अनुसार बदलता है। चले आ रहे कर्मकाण्ड में अनेक रूढ़ियां बन गई हैं। अनेक का परिष्कार नहीं हुआ। यह काम है, जो हिन्दू जगत् को करना होगा। जिसका शुभारम्भ विश्व हिन्दू परिषद् की फलश्रुति के रुप में होना चाहिए।"[9]

इस सामयिक योजना के प्रारंभ होने में उपाध्याय जी की भी भूमिका थी। विश्व हिन्दू परिषद् के मंच पर वे सहज रुप से आमंत्रित रहते थे। राजनीतिक दल का महामंत्रित्व इसमें बाधा नहीं माना जाता था। इस प्रकार के मंचों पर पूर्णतः राजनीति–निरपेक्ष होकर भूमिकाएं निभाना उपाध्याय जी की कार्यशैली व प्रतिभा का कौशल था।

3. भारतीय मजदूर संघ

23 जुलाई 1955 को भोपाल में 'भारतीय मजदूर संघ' की स्थापना हुई।[10] दत्तोपंत ठेंगड़ी इसके संस्थापक महामंत्री थे। दीनदयाल उपाध्याय ही इस भारतीयतावादी 'स्वतंत्र ट्रेड यूनियन आंदोलन' के प्रेरणास्त्रोत थे। इस संदर्भ में मनोहरभाई मेहता ने लिखा था कि,

"एकात्म मानववाद के महान् उद्गाता दीनदयाल जी के मार्गदर्शन से उत्प्रेरित श्रम संगठनवाद और विशुद्ध सांस्कृतिक राष्ट्रवाद इन दो मूलभूत अवधारणाओं के आधार पर मजदूर संगठन खड़ा करने का विचार ठेंगड़ी जी के माध्यम से क्रियान्वित हुआ। उन्हें पूरी तरह विश्वास था कि इन्हीं अवधारणाओं के बल पर श्रमिक क्षेत्र में पूंजीवाद व साम्यवाद के साथ वैचारिक युद्ध में विजय प्राप्त की जा सकती है।"

वो ऐसे संगठनों से भी जुड़े हुए थे जो जनसंघ से सम्बन्धित नहीं थे। भारतीय मजदूर संघ के लोग दीनदयाल उपाध्याय जी को बड़ी श्रद्धा से स्मरण करते हैं तथा अपनी विचारधारा का प्रेरणास्त्रोत मानते हैं। जनता पार्टी के निर्माण के समय भी यह असुविधाजनक मुद्दा रहा। जतना पार्टी में भारतीय मजदूर संघ को दलीय सम्बद्धता ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया गया। ठेंगड़ी ने इसके लिए उसी 'विशद्ध ट्रेड यूनियन' पद्धति का तर्क देते हुए इस आमंत्रण को अस्वीकार कर दिया था।

(4) अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत

पूना के बिन्दुमाधव जोशी ने सन् 1974 में 'अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत' की स्थापना उपाध्याय की मृत्यु के बाद की थी। बिन्दुमाधाव जोशी इस 'उपभोक्ता आंदोलन' के प्रारम्भ का श्रेय दीनदयाल उपाध्याय जी के साथ आए अपने सम्पर्क को देते थे वे कहते थे कि

"उत्पादन और उपभोग की अराजकता ने 'ग्राहक पंचायत' का कार्य करने की प्रेरणा दी। उपभोक्ता की जागरुकता के अभाव में उत्पादन मूल्य एवं उपभोग मूल्य में बहुत अन्तर रहता है। यह शोषण है। उपभोक्ता का उत्पादन पर नियंत्रण न रहने के कारण सार्थक उपभोग्य वस्तुओं के स्थान पर 'उपभोगवाद' को प्रश्रय देने वाली वस्तुओं का उत्पादन होता है तथा प्रचार माध्यमों का प्रयोग कर उपभोक्ता पर उनका आरोपण होता

है। मैंने दीनदयाल जी के साहित्य से इस संदर्भ में एक सूत्र ग्रहण किया, उत्पादन में वृद्धि, वितरण में समता तथा उपभोग में संयम यह भारतीय 'अर्थायाम' है।"[12]

उत्पादन व वितरण पर उपभोक्ता का नियंत्रण ही वास्तव में आर्थिक नियोजन पर समाज के अंकुश का परिचायक है। सामाजिक रुप से जागरुक होकर उपभोक्ता के नाते संगठित होने के उद्देश्य से उपाध्याय उपभोक्ता आंदोलन की कल्पना करते थे। यह आंदोलन नया था।

5. पत्रकारिता

दीनदयाल उपाध्याय सामाजिक चेतना के प्रसार के लिए पत्रकारिता का भी उपयोग करते थे। उन्होंने 'पाञ्चजन्य' साप्ताहिक तथा 'राष्ट्रधर्म' मासिक को संचालित किया। 'हिमालय' व 'स्वदेश' दैनिक थोड़े दिन चलकर बंद हो गए। उपाध्याय स्वयं इन पत्रों के कभी औपचारिक रुप से सम्पादक नहीं रहे। उन्होंने इन पत्रों के माध्यम से अनेक सम्पादकों का शिक्षण किया।[13] कुछ घटनाएं यहाँ उल्लेखनीय हैं :–

(क) जुलाई सन् 1953 का 'पाञ्चजन्य' ने एक 'अर्थ अंक निकाला'। आर्थिक विषयों पर बहुत सामग्री एकत्र कर अच्छी मेहनत के साथ यह अंक तैयार किया गया था। सम्पादक महेन्द्र कुलश्रेष्ठ को उन्होंने अंक की समीक्षा लिखकर भेजी। उनका आग्रह था कि सामग्री चयन में निष्पक्षता व पूर्णता रहनी चाहिए। अतः उन्होंने लिखा था कि, "पंचवर्षीय योजना में श्री रणदिवे की आलोचना को क्यों स्थान दिया गया ? जबकि अन्य दलों की आलोचना का समावेश नहीं है। पत्रकारिता में शिष्टाचार की अवहेलना नहीं होनी चाहिए।"[14]

(ख) भानुप्रताप शुक्ल 'पाञ्चजन्य' से संबंध थे। वे अपना अनुभव बताते थे। "पाञ्चजन्य" से उनके सम्बन्ध दिखते नहीं थे। हम लोग अनुभव करते थे कि उनका सान्निधय बड़ा मृदु एवं शिक्षाप्रद था। वे आते थे। पत्रकारिता पर चर्चा होती थी न्यूज कैसे बनाना, शीर्षक कैसे लगाना आदि से लेकर छोटी–बड़ी सब सैद्धान्तिक व्यावहारिक बातें होती थीं। हम उनसे बहस भी करते थे। इस संबंध में शुक्लजी ने एक घटना का वर्णन किया था कि,

"एक बार दीनदयाल जी लखनऊ आए। तब संत फतेह सिंह पंजाब के विषय पर आमरण अनशन कर रहे थे। हमने 'पाञ्चजन्य' में शीर्षक दिया था 'अकाल तख्त के काल'। उन्होंने यह शीर्षक हटवा दिया तथा समझाया, सार्वजनिक जीवन में इस प्रकार की भाषा का उपयोग नहीं करना चाहिए जिससे परस्पर कटुता बढ़कर आपसी चर्चा–विमर्श अथवा साथ काम करने की सम्भावनाएं ही समाप्त हो जायें। अपनी बात का दृढ़ता से कहने का अर्थ कटुतापूर्वक कहना नहीं होना चाहिए।"[15]

(ग) इसी संबंध में 'ऑर्गेनाइजर' के सम्पादक के0 आर0 मलकानी ने लिखा था कि, "जब तीन दिनों से भी कम अवधि में हरियाणा, पश्चिम बंगाल तथा पंजाब की गैर–कांग्रेसी सरकारें गिरा दी गई थी, तब हमने एक व्यंग्यचित्र छापा था। जिसमें चव्हाण लोकतंत्र के बैल को काटते हुए दर्शाए गए थे। बहुत लोगों को लगा था कि यह कुछ अतिवाद है। पंडित जी की प्रतिक्रिया थी, चाहे व्यंग्यचित्र में ही क्यों न हो, गौ–हत्या का यह दृश्य मन को धक्का पहुँचाने वाला है।[16]

इस प्रकार दीनदयाल उपाध्याय जी ने सार्वजनिक जीवन के प्रति सचेत, सुरुचिपूर्ण एवं संस्कारक्षम पत्रकारिता को अपने से सम्बद्ध कार्यकर्ताओं व समाचारपत्रों के माध्यम से विकसित करने का प्रयत्न किया। वे 'ऑर्गेनाइजर' 'पॉलिटिकल डायरी' तथा 'पाञ्चजन्य' में विचार–वीथी नाम से अनेक वर्षों तक स्थायी स्तम्भ भी लिखते रहे।

6. सामाजिक सुधार

सामाजिक बुराइयों पर दीनदयाल प्रहार करते थे। परन्तु उनका लहजा विधायक रहता था। समाज में दलितों व महिलाओं की स्थिति के बारे में, हिन्दू के नाम पर राजनीति करने वाले सामान्यतः अनुदार माने

जाते हैं। मध्यमवर्गीय सनातन हिन्दू मानसिकता एवं रामराज्य परिषद् जैसी संस्थाओं के साथ जनसंघ का नाम जुड़ जाने के कारण जनसंघ तथा दीनदयाल जी भी इन विषयों में अनुदार होंगे, ऐसी सामान्यतः धारणा रहती थी, लेकिन दीनदयाल उपाध्याय जी सामाजिक बुराईयों के खिलाफ संवैधानिक संरक्षणों के पक्षधर थे। अतः उन्होंने आग्रहपूर्वक जनसंघ के संविधान में मण्डल समितियों के गठन में महिलाओं तथा अनुसूचित जाति व जनजाति के सदस्यों के लिए दो–दो स्थान आरक्षित करवाए थे।

इसी प्रकार 'परिवार नियोजन' के लिए कृत्रिम उपायों के उपयोग के बारे में भी काल्पनिक श्रेष्ठता व पवित्रता के आवरण में विरोधी तथा अनुदार दृष्टिकोण यंत्र–तंत्र दिखाई देता है। जनसंघ की नागपुर अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा के अधिवेशन के समय मध्यप्रदेश के एक प्रतिनिधि ने 'परिवार नियोजन' के लिए केवल ब्रह्मचर्यपूर्वक संयमी जीवन को स्वीकार करना चाहिए, भारतीय जनसंघ कृत्रिम उपायों के उपयोग का विरोध करें, ऐसा प्रस्ताव रखा। उपाध्याय जी ने समझाया था कि कल्पना लोक में रहने का लाभ नहीं है। हमें व्यावहारिक बनना चाहिए तथा उस प्रस्ताव को बहुमत से अस्वीकृत कर दिया गया था।[18]

कानून का पालन करना, कर–अदायगी न करना तथा अवैधानिक आचरण कर समाज में भ्रष्टाचार फैलाना आदि लोकतांत्रिक व संविधानवादी समाज की भयानक बुराइयाँ है जो कि लोकतंत्र की जडों को खोखली कर रही थी। उपाध्याय जी ने इन विषयों पर लोकजागरण के लिए संगठन के कार्यकर्ताओं को शिक्षित करने का प्रयत्न किया था।[19]

लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा ने समाज में कर्मचारियों का एक बहुत बड़ा वर्ग उत्पन्न कर दिया है। राजनीतिक व आर्थिक जीवन में अधिक लोगों की सहभागिता की अच्छाई के साथ जो अनेक बुराईयाँ आई हैं उनमें एक बड़ी बुराई 'रिश्वतखोरी' है। दीनदयाल उपाध्याय जी ने एक शिक्षाप्रद ललित लेख लिखा था। रिश्वतखोरी के समाजशास्त्र व मनोविज्ञान का विशद् विवेचन करते हुए इसके निवारण हेतु उपाध्याय ने कहा था कि,

"हम इस पाप को यदि जड़मूल से मिटाना चाहते हैं तो इस पर चारों ओर से हमला करना होगा। प्रथम तो यह भाव व्यापक रुप से समाज में उत्पन्न करना होगा, कि रिश्वत लेना और देना कानून की दृष्टि से ही दण्ड़नीय नहीं, सामाजिक रुप से भी पाप है। जो इस पाप के दोषी हैं वे समाज में अधिकाधिक निंदनीय हों, इसका यत्न करना होगा। ऐसे लोग मताधिकार से वंचित किए जाने चाहिए। उनको जो दण्ड़ दिया जाये, जो समाज को भी दिखाई दे।"[20] समाजिक बुराई को दूर करने का तरीका सामाजिक संस्कार व शिक्षा ही है। विविधायामी संगठनों से जुड़कर दीनदयाल उपाध्याय जी ने इस संदर्भ में सतत् संक्रिय प्रयत्न किए थे।

7. लोकमत–परिष्कार

लोकमत को विवेकवान् बनाना सामाजिक समस्याओं के निदान की गारंटी है। लोकमत को परिष्कृत करने के सरकारी प्रयत्नों को उपाध्याय जी अन्य सामाजिक बुराईयों की तुलना में एक बड़ी बुराई मानते थे। अतः वे सांस्कृतिक प्रयत्नों से लोकमत–परिष्कार के समर्थक थे। 'लोकमत' के समाज–विज्ञान को विश्लेषित करते हुए अपना मत प्रकट किया था कि, "रूस एवं अन्य साम्यवादी देशों में यह काम राज्य के द्वारा किया जाता है। मार्क्स के सिद्धांतों के अनुसार मजदूरों की क्रांति के पश्चात् प्रतिक्रान्ति की संभावना है। उसे रोकने के लिए कठोर उपायों के अवलम्बन की आवश्यकता है। साथ ही अभी तक जीवन के जो मूल्य स्थापित हुए हैं, वे पूँजीवादी अर्थव्यवस्था पर आधारित है। उन्हें हटाकर नए प्रगतिवादी मूल्यों की प्रतिष्ठा करनी होगी।

यह कार्य लेनिन ने राज्य को, जो कि उसके अनुसार सर्वहारा के प्रतिनिधियों एवं क्रांतिदर्शी महानुभावों द्वारा चलाया जाता है, सौंपा था। किंतु उसका परिणाम यह हुआ था कि वहाँ लोकमत–परिष्कार के नाम पर व्यक्ति की सभी स्वंतत्रताएँ समाप्त कर दी गईं तथा कुछ व्यक्तियों की तानाशाही ही सम्पूर्ण जनता की इच्छा

के नाम पर चलने लगी। जो दवा दी गई उससे बिमारी तो ठीक नहीं हुई, हाँ, मरीज अवश्य चल बसे। अर्थात् समस्याएँ दोनों ओर है। एक ओर अपरिष्कृत लोकमत, जिसकी दिशा कभी सोच–विचार कर निश्चित नहीं होती।" शेक्सपीयर ने अपने नाटक 'जूलियस सीजर' में उसका बड़ी स्पष्टता से चित्रण किया है। जो जनता ब्रूटस के साथ होकर जूलियस सीजर का वध कर हर्ष मना रही थी, वही थोड़ी देर में, एण्टोनियो के भाषण के उपरान्त ब्रूटस का वध करने को तैयार हो गई थी। मॉबोक्रेसी और ऑटोक्रेसी, दो पाटों के बीच से, डेमोक्रेसी को जीवित रखना एक कठिन समस्या है।"21

सारांश

अतः जनता को सुसंस्कृत करने का सबसे अधिक महत्व है। जब तक इस काम को करने वाले राज्य के मोह से दूर, भय से मुक्त, उदार पुरुष एवं संगठक रहेंगे, लोकमत सही दिशा में चलता जायेगा।[22]

प0 दीनदयाल जी राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के कार्य को ऐसा ही मानते थे। इसी कार्य के पोषण हेतु उन्होंने अपना जीवन सर्वस्व लगाया। राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ का इस दृष्टि से मूल्यांकन अभी यहाँ संभव नहीं है। भारत के विविध सामाजिक–सांस्कृतिक आंदोलनों, जिनमें राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ भी एक है, उस के प्रभाव का इस दृष्टि से अनुसंधान होना चाहिए। समाजशास्त्र के अध्येताओं के लिए यह बहुत उपादेय सिद्ध होगा।

संदर्भ

1. महेश चन्द्र शर्मा – दीनदयाल उपाध्यायः कृर्तव्य एवं विचार, पृ0 292
2. जून 1963 में राजस्थान में राष्ट्रीय स्वंयसेवक संघ के वार्षिक, संघ शिक्षा–वर्ग, उदयपुर से–
3. बाबासाहब आपटे 'पुनीत स्मृति' राष्ट्रधर्म, दीनदयाल उपाध्याय स्मृति अंक जून–जुलाई, 1967 पृ0 41
4. यादवराव जोशी–मौनस्मृति, राष्ट्रधर्म, दीनदयाल उपाध्याय स्मृति अंक, जून–जुलाई, 1967 पृ0. 138
5. महेशचंद्र शर्मा–पृ0. 294
6. पाञ्चजन्य–सन् 1949 पृ0.16
7. Bal Apte - "Educational Changes" सन् 1977
8. पाञ्चजन्य–14 सितम्बर 1964 पृ0.. 2
9. पाञ्चजन्य–10 जनवरी, 1966 पृ0. 6
10. 23 जुलाई 1955 को भारतीय मजदूर संघ की स्थापना।
11. ओर्गेनाईजर–17 जुलाई 1983
12. सन ्1974 ग्राहक पंचायत की स्थापना 21 अप्रैल 1974 में पूना में भेंटकर्ता साक्षात्कार पंजिका, पृ0. 67
13. महेशचंद्र शर्मा पृ0. 297
14. पाञ्चजन्य, 28 दिसम्बर, 1953 अर्थ अंक
15. 27 जनवरी, 1985 साक्षात्कार–पंजिका, पृ0. 91
16. ओर्गेनाइजर सन् 1968
17. भारतीय जनसंघ घोषणाएँ व प्रस्ताव 1951–52, भाग–1 पृ0. 187
18. पाञ्चजन्य 21 नवम्बर ,1966 पृ0. 10
19. पाञ्चजन्य 30 नवम्बर, 1953 पृ0. 9
20. पाञ्चजन्य 28 सितम्बर, 1953
21. महेशचंद्र शर्मा पृ0. 301

22. दीनदयाल उपाध्याय–राष्ट्र जीवन की दिशा पृ0. 83–84